26 जनवरी 1985 से एक और नीतिगत निर्णय लिया गया। जब सभी प्रायमरी केन्द्रों से भी विज्ञापनों के प्रसारण का निश्चय किया गया। आज तो देश के सभी एफ.एम. विविध भारती और प्रायमरी चैनल्स विज्ञापन प्रसारित हो रहे हैं।

विज्ञापन के संदर्भ में एक शेर है-

हमारी दास्तां शहर के दीवारों पे चिपकी है,
हमें ढूंढेगी दुनिया, कल पुराने इश्तिहारों में।

निःसंदेह विज्ञापन आज युग का धर्म और जीवन के लिए आवश्यक बन गया है, लेकिन विज्ञापनों की भीड़ में कार्यक्रमों की गुणवत्ता और समग्रता के खो जाने का खतरा भी बढ़ गया है, वैसे भी यह समय दृश्य माध्यमों के वर्चस्व का समय है जिसके चलते हमारा ''श्रोता'', ''दर्शक'' में बदल गया है यह कई अर्थों में ''सुने जाने योग्य'' शब्दों पर संकट है, जो शायद अन्ततः 'वाणी' के संस्कारों को विदा करेगा। ऐसे समय में आकाशवाणी की भूमिका और उसके कार्यक्रमों का प्रसारण न केवल महत्वपूर्ण है बल्कि भाषा, साहित्य, संगीत के माध्यम से मनुष्य के वैचारिक कल्पना लोक को बनाए रखने के लिए अनिवार्य भी। गेब्रिल गार्सिया मार्क्वेज ने अपनी कृति ''हन्ड्रेड इयर्स ऑफ सॉलीच्यूड'' को टीवी या फिल्म वालों को देने से मना करते हुए कहा था- अलबत्ता रेडियो को दे सकता हूं क्योंकि रेडियो मेरे पाठक या श्रोता की कल्पनाशक्ति को (इमिजैनेशन पावर) बाधित नहीं करेगा।

इस नज़रिये से भी आकाशवाणी, विविधभारती के कार्यक्रमों को देखना होगा। सुनना होगा। कार्यकर्ताओं की जितनी विविधता आज भी आकाशवाणी के पास है, उतनी अन्य माध्यमों के पास नहीं है, और शायद अन्य एफ.एम. चैनल्स ने वैसा चाहा भी नहीं है। आकाशवाणी और विविध भारती की विविधता की प्रसार भारती की नीति और नीयत के चलते जिस 'घुटन' का अनुभव ही रहा है, उसके प्रति आंख बंद कर लेने या नजरअंदाज कर देने का अर्थ है, एक समृद्ध विरासत का विसर्जन।

7 अगस्त 1970 से शुरू हुए इस सफर के अंतिम दिन यानी 31 जुलाई 2016 के दिन वर्ष भर से प्रसारित होने वाले अपने कार्यक्रम ''बड़े अनमोल गीतों के बोल'' के लिए जो गीत मैंने चुना था- वह था फिल्म 'दो बीघा जमीन' का गीत, ''अपनी कहानी छोड़ जा, कुछ तो निशानी छोड़ जा, मौसम बीता जाए।''

सच है, जीवन का मौसम बहुत तेजी से बीतता है, हम जिसे सफर की शुरूआत समझ रहे होते हैं देखते ही देखते अंतिम पड़ाव आ जाता है और जहां से होकर गुजरे उस ओर फिर जाने की इच्छा, सुविधा, साधन और समय शायद नहीं होता। हमारे हाथ में सिर्फ इतना है कि मिले हुए पल को कल पर न छोड़े-गीत कह रहा है-

कौन कहे इस ओर तू फिर आए न आए।

इसी गीत की पंक्ति है,- मन की वंशी पे तू भी कोई धुन बजा ले-

नीला अम्बर मुसकाए, हर सांस तराना गाए,

नीले अम्बर में हर सांस का शब्द के रूप में परिवर्तित होना ही आकाश में शब्द की गूंज है। इस गूंज को सुरजित पातर की कविता के माध्यम से सुनना और समझना होगा-

मैं आठ बॅण्ड का ट्रांजिस्टर हूं / मुझमें बी.बी.सी. बोलता है /
बोलता है वाइस ऑफ अमेरिका
मैं दुनियाभर की सूचनाओं का संवाहक हूं।
नहीं बोलता तो बस,
मैं ही नहीं बोलता
मैं खामोश हूं।

माध्यमों के शोर में, शब्दों की खामोशी को सुनिए या मौन आपको हमें मुखर बनाएगा। ■